

पक्वाशयगत वात : एक समीक्षा

बालयोगेश्वर शर्मा एवं आशीष मेहता
पंचकर्म विभाग, श्री कृष्णा आयुष विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र 136118
ई-मेल: vasisth.yogi3@gmail.com

सारांश

पक्वाशयगत वात, पक्वाशय यानी बृहदान्त्र में वात के बढ़ने की स्थिति है। पक्वाशयगत वायु के बढ़ने से आंत्रकूजन (आंत में गुड़गुड़ाहट की आवाज़), शूल (पेट में दर्द), आटोप (पेट फूलना), कृच्छमूत्रपुरीष (मूत्रत्याग में कठिनाई, कब्ज), आनाह (पेट फूलना), त्रिकप्रदेश में वेदना (कटिप्रदेश में दर्द) होता है। आधुनिक युग में वात व्याधियों की संख्या लगातार बढ़ रही है क्योंकि लोग उचित शारीरिक, मानसिक व्यायाम और खान-पान की आदतों को कम महत्व देते हैं। पक्वाशयगत वात के लक्षण कई रोगियों में अकेले या अन्य शिकायतों के साथ पाए जाते हैं। वात को सामान्य करने और व्याधि को आगे बढ़ने से रोकने के लिए पक्वाशयगत कुपित वात का उचित प्रबंधन बहुत महत्वपूर्ण है। जब वात की स्थिति पक्वाशय में बढ़ जाती है, जो कि विशेष रूप से वात स्थान ही है तब पक्वाशयगत वात में स्नेह विरेचन, शोधनीय वस्ति तथा लवण प्रधानाहार देना चाहिए। स्नेह विरेचन का पक्वाशय (पित्ताशय) गतवात के प्रबंधन के लिए संकेत दिया जाता है, जो रुग्ण कारकों को खत्म करने और लाभकारी प्रभाव पैदा करने में मदद करता है। शोधन वस्ति वायु के मल, पित्त व कफ से आवृत होने पर लाभकारी प्रभाव देती है। स्नेह विरेचन एवं शोधन वस्ति पक्वाशयगत वात के सुरक्षित और प्रभावी प्रबंधन के लिए सबसे अच्छा विकल्प है।

मुख्य शब्द : पक्वाशय, गतवात, आवरण, पक्वाशयगतवात, शोधनवस्ति

Pakvashyagata Vata : A Review

Balyogeshwar Sharma, Ashish Mehta
Department of Panchakarma, Shri Krishna Ayush University, Kurukshetra 136118
E-mail: vasisth.yogi3@gmail.com

Abstract

Pakvashyagata Vata is the condition of aggravation of Vata in the large intestine. Aggravation of Vayu in Pakvashaya causes Antrakujana (gurgling sound in the intestine), Shula (stomach pain), Atopa (flatulence), Krichha-mutra-puris (difficulty in passing urine, constipation), Aanah (flatulence), Trikapradesh Vedana (pain in the waist region). In the modern era, the number of Vata diseases is constantly increasing because people give less importance to proper physical, mental exercise and food habits. Symptoms of Pakvashyagata Vata are found in many patients alone or with other complaints. Proper management of Pakvashyagata Vata is very important to normalize Vata and prevent the disease from progressing. When the condition of Vata aggravates in the Pakvashya, which is especially the Vata place, then Sneha Virechana, Shodhani Vasti and the diet enriched with saindhalavalavana should be given in Pakvashyagata Vata. Sneha Virechana is indicated for the management of aggravated Vata in the Pittasya, which helps to eliminate the aggravating factors and produce beneficial effects. Shodhana Vasti gives beneficial effects when Vayu is obstructed by Mala, Pitta and Kapha. Sneha Virechana and Shodhana Vasti are the best option for safe and effective management of aggravated Vata in the Pakvashya.

Keywords: Pakvashya, Gatavata, Avarana, Pakvashyagata Vata, Shodhana Basti

प्रस्तावना

अकुपित वात-दोष, धातु तथा अग्नि की समता रखने वाला, शरीर में श्वास-प्रश्वास, पाचन रक्त-संचरण आदि क्रियाओं तथा पंचकर्मद्रियों की वचनादि क्रियाओं को ठीक रूप से संचालित करता है। यह वायु

पाँच प्रकार की होती है, अर्थात् प्राण, उदान, व्यान, समान और अपान' और वे बिना किसी अनियमित गति के अपने स्थानों पर इष्टतम रूप से रहते हुए शरीर को संचालित करते हैं। यदि किसी व्यक्ति में वायु अप्रभावित रूप से चलती है, तो वह व्यक्ति रोगमुक्त होकर सौ वर्षों से

अधिक समय तक जीवित रहता है^२। प्राकृतिक अवस्था का तात्पर्य न तो कम होना और न ही बढ़ा होना है। जब पाँचों प्रकार की वायु अपने-अपने स्थानों पर इष्टतम रूप से स्थित होती हैं, तो वे अपना कर्तव्य निभाती हैं और जीवन को सहारा देती हैं। जब गति बढ़ जाती है (गतत्व) या बाधित हो जाती है (आवरण) तो वात की कार्यात्मक सामान्यताएँ बाधित हो जाती हैं। गति या गतत्व के दो निहितार्थ हैं, एक गतिविधि के अधीन (चलना, कार्यान्वित करना या पहुँचना) और दूसरा गतिविधि के निवास (मार्ग) के अधीन। गतत्व किसी भी वातज संप्राप्ति का एक अनिवार्य हिस्सा है। वात का गतत्व धातुओं, उपधातुओं, आशय, अवयव आदि में संभव है। वात के बढ़ने के कारणों से वात का विस्थापन होता है, जो शरीर के विभिन्न भागों पर जाकर स्थानीय दर्द का कारण बनता है। इस वातव्याधि का नाम उस अंग के नाम पर रखा गया है जिसे यह प्रभावित करता है^३। पक्वाशयगत कुपित वात पक्वाशय (बृहदान्त्र) में उत्तेजित वात की स्थिति है। जब वात की स्थिति पक्वाशय में बढ़ जाती है, जो कि विशेष रूप से वात स्थान ही है, तब पक्वाशयगत वात में स्नेह विरेचन, शोधनीय वस्ति तथा लवण प्रधानाहार देना चाहिए^४। स्नेह विरेचन पक्वाशयगत कुपित वात के प्रबंधन के लिए संकेत दिया जाता है, जो रुग्ण कारकों को खत्म करने और लाभकारी प्रभाव पैदा करने में मदद करता है। शोधन वस्ति वायु के मल, पित्त व कफ से आवृत होने पर लाभकारी प्रभाव देती है। स्नेह विरेचन एवं शोधन वस्ति पक्वाशयगत कुपित वात के सुरक्षित और प्रभावी प्रबंधन के लिए सबसे अच्छा विकल्प है।

उद्देश्य और लक्ष्य

- पक्वाशयगतवात में वस्ति पर संपूर्ण साहित्य की समीक्षा करना।
- पक्वाशयगत वात के प्रबंधन में वस्ति कर्म की उपयोगिता का अध्ययन करना।

सामग्री

- आयुर्वेद के शास्त्रीय ग्रंथों का उपयोग करके साहित्य की समीक्षा पूरी की गई।
- विभिन्न संदर्भों का संग्रह किया गया और व्याख्या की गई।

पक्वाशयगत वात की समीक्षा

प्राण वायु का स्थान सिर, छाती, गला, जीभ, मुँह और नाक है। यह थूकना, छींकना, डकार लेना, सांस लेना, भोजन निगलना आदि कार्य करता है। उदान वायु का स्थान नाभि, छाती और गला है और यह वाणी, प्रयास, उत्साह, शक्ति आदि के लिए जिम्मेदार है। समान वायु का स्थान अंतराग्नि या जठराग्नि (पाचन एंजाइमों का स्थान) के पार्श्व में स्थित है। यह पाचक अग्नि को शक्ति प्रदान करता है। व्यान वायु में तेज गति होती है और यह सभी अंगों में फैलता है। यह चाल,

लचीलापन, फैलाव, आंखों का झपकना और अन्य गतिविधियों के लिए जिम्मेदार होता है। अपान वायु को अंडकोष, मूत्राशय, लिंग, नाभि, जांघों, वंक्षण क्षेत्र और गुदा में स्थित बताया गया है और यह वीर्य स्खलन, मूत्र त्याग, शौच, मासिक धर्म के रक्त को निकालने और भ्रूण को जन्म देने का कार्य करता है^५। यह वायु सम्पूर्ण शरीर में स्थित है और एक ही है परंतु स्थानानुसार वायु के पांच विकल्प भेद हैं। ये पांच प्रकार के वायु सामान्य अवस्था में अपने-अपने निवास में स्थित होते हैं और शरीर को स्वस्थ अवस्था में बनाए रखने के लिए अपना कार्य ठीक से करते हैं^६। जब ये पांच प्रकार की वायु अपने से अलग स्थान पर स्थित हो जाती हैं और बाधित होने पर शरीर को अपने स्थान और कार्य से संबंधित रोगों से पीड़ित करती हैं। पक्वाशयगत कुपित वात संहिता में वर्णित उत्तेजित वात की एक स्थिति है। पक्वाशय शब्द उत्तरगुद को दर्शाता है इसलिए, पक्वाशयगत वात के मामले में, यह उस स्थान को दर्शाता है जहाँ उत्तेजित वात स्थित है। कुपित शब्द का अर्थ है वात की उत्तेजित या बढ़ी हुई स्थिति। वात के कुपित होने का कारण-रूक्ष, शीतल वस्तुओं का सेवन, अल्प मात्रा में तथा लघु अन्न का सेवन, अधिक मैथुन, अधिक रात्रि जागरण, विषम अन्य उपचार से, अर्थात् वमनादि पंचकर्म का अनुचित रूप से सेवन और सात्प्य, विरुद्ध आहारों का सेवन, शारीरिक चेष्टाओं का अनुचित रूप में प्रवृत्त करना आदि विषम उपचार, दोष और रक्त को अधिक मात्रा में निकालना, लंघन (कूदना), प्लवन (तेरना), अधिक चलना, अधिक व्यायाम आदि चेष्टाओं को उचित रूप से न करने से रस-रक्तादि धातुओं का क्षय, चिन्ता, शोक और चिरकाल से पीड़ित रोगों से अत्यन्त कृश हो जाना, सुखपूर्वक शयन न करना, सुखपूर्वक न बैठना, क्रोध, दिन में सोना, भय, मल-मूत्रादि के वेगों को रोकना, आमदोष, चोट लगना, भोजन न करना, मर्मस्थान में चोट लगना, हाथी, ऊँट, घोड़ा आदि शीघ्र चलने वाली सवारियों से गिरना आदि से शरीर में रिक्त (खाली) स्रोतों को बलवान् वायु कुपित होकर भर देती है। इससे शरीर के सम्पूर्ण मार्गों में या किसी अंग विशेष में होने वाले अनेक रोगों को उत्पन्न करती है।

वात व्याधि के लक्षण

वायु के बढ़ने से संकुचन, जोड़ों में अकड़न और हड्डियों तथा जोड़ों में दर्द, घबराहट, प्रलाप, हाथ-पैरों में लंगड़ापन, कूबड़ापन, अंगों का शोथ, अनिद्रा, भ्रूण, वीर्य और मासिक धर्म का नाश, शरीर में ऐंठन और सुन्नपन, सिर, नाक, आंख, हंसली और गर्दन का सिकुड़ना, फटने जैसा दर्द, चुभन जैसा दर्द, असहनीय दर्द और इसी तरह के अन्य लक्षण। वायु का बढ़ा हुआ होना, कारण कारक की विशिष्ट प्रकृति और अभिव्यक्ति की स्थिति के कारण विशिष्ट रोग उत्पन्न करता है।

आचार्य डल्हण ने पक्वाशय को दो भागों में विभक्त किया है- पित्ताशय एवं वाताशय। वाताशय में वायु के आवरण की तीन अवस्थाएं सम्भव हैं- मलावृत वात, पित्तावृत वात एवं कफावृत वात। पित्ताशय एवं वाताशयगत वात की अवस्था में भिन्न-भिन्न चिकित्सा व्यवस्था का उल्लेख आचार्य डल्हण द्वारा किया गया है।

पक्वाशय में वायु का बढ़ना

पक्वाशय में प्रवृद्ध वायु विभिन्न आचार्यों द्वारा उल्लेखित लक्षणों को उत्पन्न करती है जो कि तालिका -1 में वर्णित है।

संप्राप्ति (रोगजनन)

बढ़े हुए वात दोष के कारण धातुओं का क्षय होता है। वात दोष तब खाली स्रोतसो को भर देता है और उनके अंदर बहुत आगे बढ़ जाता है या स्रोतसो को भरने वाले अन्य दोषों से आवृत हो जाता है। पक्वाशयगत वात में वायु पित्ताशय एवं वाताशय में जाकर विभिन्न लक्षणों को उत्पन्न करता है। पक्वाशयगत वात में वायु वाताशय में रहने पर मल, पित्त एवं कफ से आवृत होने पर इन लक्षणों को उत्पन्न करता है-

मलावृत वायु का लक्षण: जब मल से आवृत वायु होती है तो मल नीचे की ओर अत्यन्त विबन्ध युक्त होता है अर्थात् मल रुक जाता है। पक्वाशय में कैंची से काटने के समान पीड़ा होती है। भोजन करने के पश्चात् खाये हुये स्नेह का पाचन शीघ्र ही हो जाता है तथा भोजन के बाद मनुष्य को आनाह हो जाता है। अन्न से पीड़ित हुआ, दुःखपूर्वक, सूखा और देर से मल का त्याग होता है। श्रोणि, वंक्षण और पृष्ठ प्रदेश में वेदना होती है, सर्वदा वायु विलोम रहता है अर्थात् कभी भी अनुलोम नहीं होता है रोगी का हृदय अस्वस्थ रहता है अर्थात् उसका हृदय नियत कार्य को नहीं करता है जिससे मनुष्य सर्वदा अपने को अस्वस्थ समझता है।

पित्तावृत अपान वायु का लक्षण: यदि पित्त से अपान वायु आवृत हो जाती है तो हल्दी के समान पीले वर्ण का मूत्र और मल निकलता है। गुदा और मूत्रेन्द्रिय में ताप होता है। यदि स्त्री के शरीर में पित्त से आवृत अपान वायु होती है तो मासिक स्राव अधिक रूप में होने लगता है अर्थात् वह स्त्री प्रदर रोग से पीड़ित हो जाती है।

कफावृत अपान वायु का लक्षण: यदि कफ से अपान वायु आवृत हो जाती है तो पतला, आम और कफ मिश्रित, गुरु मल की प्रवृत्ति होती है और कफजन्य प्रमेह से रोगी पीड़ित हो जाता है।

चिकित्सा

यदि वात व्याधि केवल वात के कारण होती है और यदि कोई अवरोध शामिल नहीं है, तो शुरुआत में, रोगी को स्नेहन चिकित्सा द्वारा इलाज किया जाना चाहिए जिसके लिए घी, मांसपेशियों की चर्बी, तेल और अस्थिमज्जा दी जानी चाहिए। उसे अनुवासन वस्ति (औषधीय तैल का एनीमा) और ताज़ा भोजन/पेय भी दिया जा सकता है। रोगी को ठीक से अभ्यंग (तेल लगाने) के बाद स्वेदन चिकित्सा (सिंकाई) दी जानी चाहिए।

नाड़ी स्वेद, प्रस्तर स्वेद, संकरस्वेद जैसी चिकित्सा पद्धतियों के साथ-साथ अन्य प्रकार की उपयुक्त चिकित्सा पद्धतियों का प्रयोग किया जाना चाहिए¹²। यदि रोग कम न हो तो रोगी को चिकनाई युक्त पदार्थों के साथ हल्की औषधियों की सहायता से शोधन चिकित्सा दी जानी चाहिए। इस प्रयोजन के लिए रोगी को तिल्वक या सप्तला को उबालकर तैयार किया गया औषधीय घी लेना चाहिए अथवा वह दूध के साथ एरंड का तेल ले सकता है। वे रोगग्रस्त पदार्थों के उन्मूलन में सहायता कर सकते हैं तथा लाभकारी प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं। स्नेह विरेचन को पक्षाघात में कुपित वात के प्रबंधन के लिए इंगित

तालिका 1: पक्वाशयगत वात के लक्षण

लक्षण	चरक ⁷	सुश्रुत ⁸	वाग्भट ⁹	माधवनिदान ¹⁰	योगरत्नाकर ¹¹
आंत्रकृजन	+	+	+	+	+
शूल	+	+	+	+	+
आटोप	+	-	-	+	+
कृच्छ्र मूत्र पुरीष	+	+	-	+	+
आनाह	+	+	+	+	+
त्रिकप्रदेश में वेदना	+	+	+	+	+
मलावरोध	-	-	+	-	-
अश्मरी	-	-	+	-	-
अण्डवृद्धि	-	-	+	-	-
अर्श	-	-	+	-	-

किया जाता है। किसी रोग के उपचार में अपनाई जाने वाली निदान परिवर्जन का अर्थ केवल उस रोग के प्राथमिक रोगात्मक कारणों को त्यागना है। बृहदान्त्र में स्थित रोगग्रस्त वात की स्थिति में उदावर्त का उपचार दिया जाना चाहिए। अधोभाग के माध्यम से दोषों के उन्मूलन की प्रक्रिया को विरेचन के रूप में जाना जाता है। चक्रपाणि ने अधोभाग का अर्थ 'गुदा' बताया है। विरेचन वह प्रक्रिया है जिसमें मौखिक रूप से दी जाने वाली औषधि आंतरिक रूप से दूषित दोषों पर विशेष रूप से पित्त पर कार्य करती है और उन्हें गुदा मार्ग के माध्यम से बाहर निकाल देती है। विरेचन को बढ़े हुए पित्त दोष को खत्म करने में सबसे प्रभावी माना जाता है और यह कफ व वात दोष को भी खत्म करने में सक्षम है। स्निग्ध द्रव्य का उपयोग करके दिया जाने वाला विरेचन स्निग्ध विरेचन के रूप में जाना जाता है। यह उन रोगियों के लिए वर्जित है जिन्हें बहुत अधिक आभ्यन्तर स्नेहपान दिया गया हो। स्निग्ध विरेचन के उदाहरण हैं एरंड तैल, तिल्वक घृत, आरग्वध फला मज्जा, सप्तला घृत आदि। पक्वाशयगत कुपित वात के विशिष्ट पथ्य में लवण युक्त आहार का उल्लेख किया गया है।

पक्वाशयगत वात की चिकित्सा में वायु के पित्ताशय में कुपित होने पर तिल्वक सिद्ध घृत एवं एरंड तैल का निर्देश किया गया है। वायु के वाताशय में कुपित होने पर मलावृत वात की अवस्था में विदारीकल्क से सिद्ध स्नेहयुक्त उष्ण क्षार वस्ति, पित्तावृत वात की अवस्था में शीत क्षारवस्ति, कफावृत वात की अवस्था में व्यक्त क्षार उष्ण वस्ति का प्रयोग आचार्य डल्हण ने विस्तारपूर्वक बताया है।

चर्चा

वातव्याधि के निदान कारकों को सूचीबद्ध किया गया है और उससे जनित वातव्याधि की दो प्रमुख रोगसंप्राप्ति हैं- धातुक्षयजन्य और आवरणजन्य। धातुक्षय में दूषित वात गतत्व की स्थिति धारण कर लेता है और धातुगत वात, आशयगत वात और अवयवगत वात की ओर ले जाने वाले विभिन्न स्थलों पर व्याप्त हो जाता है। पक्वाशयगत वात में वायु आशयगत होता है तथा वाताशय गत वात में वायु पर मल, पित्त एवं वात का आवरण होता है। अतः पक्वाशयगत वात में वायु का गतत्व एवं आवरण दोनों सम्प्राप्ति का समावेश होता है। जैसा कि केवल वात में प्रमुख गुणवृद्धि रूक्ष है जो स्रोतस और धातुओं में रिक्तता की ओर ले जाती है और वात के लिए अधिक अवकाश की स्थिति बन जाती है। ऐसी अवस्था में स्नेहन आवश्यक एवं आदर्श है। स्नेहन के लिए विभिन्न विधियाँ बताई गई हैं जो रोग की अवस्था, स्थान और बल के साथ-साथ रोगी पर भी निर्भर करती हैं। स्नेहन के बाद स्वेदन करना है। बार-बार किया गया स्नेहन और स्वेदन उच्च श्रेणी का लचीलापन प्रदान करता है। लेकिन अभी भी अवशिष्ट दोष की संभावना रहती है, जिसका उन्मूलन किया जाना चाहिए। इसलिए,

उपचार के संशोधन प्रकार को समझाया गया है। चूंकि शोधन में वात प्रकोप होने की एक निश्चित संभावना है, इसलिए संशोधन को सावधानीपूर्वक किया जाता है। इस प्रकार मृदु संशोधन को समझाया गया। आगंतुक दोष की तुलना में स्थानगत दोष अधिक या समान रूप से महत्वपूर्ण है। पक्वाशय वात का मुख्य स्थान है, इसलिए स्नेह विरेचन पक्वाशयगत कुपित वात में लाभकारी है। जब वात पक्वाशय में स्थित होता है जो विशेष रूप से वात स्थान ही है, तब उदावर्तहार उपचार, जो वातानुलोमन के अलावा और कुछ नहीं है, सबसे अच्छा विकल्प हो सकता है। वायु के मल, पित्त एवं कफ से आवृत होने पर आवरण को छिन्न भिन्न करने के लिए शोधन वस्ति (क्षारवस्ति) का महत्व है।

निष्कर्ष

पक्वाशयगत कुपित वात लक्षण के रोगियों की संख्या बढ़ रही है और वात को सामान्य करने तथा रोग को आगे बढ़ने से रोकने के लिए इसका उचित प्रबंधन बहुत महत्वपूर्ण है। स्नेह विरेचन एवं क्षारवस्ति पक्वाशयगत कुपित वात के सुरक्षित और प्रभावी प्रबंधन के लिए सबसे अच्छा विकल्प है।

संदर्भ

1. Dash Bhagwan (2001), Agnivesha's Charaka Samhita Vol-V, 2nd Edition, Varanasi: Choukhambha Sanskrit Series Office (Chikitsasthan 28/5) Page No 20.
2. Ibidem (1) (Chikitsasthan 28/3), Page No 19
3. Saxena Nirmal,(2007) Yogatarangini of Trimalla Bhatta, 1st Edition, Varanasi: Choukhambha Sanskrit Bhavan, (Chapter 40/1), Page No 243.
4. Susruta, Acharya YT. Susruta Samhita. with Nibandhaangraha Commentary by Dalhana and Nayachandrikapanjika of Gayodasa Acharya on Susrutasamhita of Susruta. chikitsasthana; Vatavyadhichikitsa: Chapter 4, Verse 5. reprint ed. Varanasi: ChaukambaPublications: 2014. p. 33.
5. Ibidem (1) (Chikitsasthan 28/6-9), Page No 20,21.
6. Ibidem (1) (Chikitsasthan 28).
7. Ibidem (1) (Chikitsasthan 28/28-29), Page No 26.
8. Ibidem (2) (Nidanasthan 1/23-24), Page No 298.
9. Tripathi Brahmananad (2011), Astangh Hridayam of Srimad vagbhata, Varanasi, *Chaukambha Sanskrit series publication*, (Nidanasthan 15/7) Page no; 538.
10. Vaidya Jadhavji Trikamiji Acharya (2010), Madhava Nidana, Varanasi, Chaukambha Orientalia, (Chapter 22/14) Page No: 166.
11. Kumari A & Tiwari P V (2010) Yogratnakar Part-1 1st Edition Varanasi, *Chaukambha Visvabharati*, (Chikitsa 25/6), Page no; 574.
12. Ibidem (1) (Chikitsasthan 28/75-83), Page 43.